पंचायतीराज के क्षेत्र में महिला नेतृत्व के उभरते प्रतिमान एवं चुनौतियां

डॉ० शिवानी
राजनीतिशास्त्र विभाग
डी०ए०वी० सैन्टनरी कॉलिज, फरीदाबाद
ईमेलः shivanitanwar1973@gmail.com

सारांश

आज भारतीय समाज में महिलाओं की तस्वीर बदल रही है। राजनैतिक एवं सामाजिक प्रतिबन्धता ने ऐसे वातावरण का निर्माण कर दिया है जिसमें महिलाएँ स्वतंत्र महसूस कर रही है उनसे जुड़े अनेक उपबन्धों, अधिनियमों और योजनाएँ उनके लिए जहाँ शिक्षा के नये अवसर प्रदान कर रहे है वहीं रोजगार के भी नये अवसर बढ़ रहे हैं। प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की क्षमताओं को स्वीकार किया जा रहा है। सामाजिक जीवन के मूल्यों में बदलाव आने से एक सकारात्मक प्रभाव परिलक्षित हो रहा हैं। ऐसे में महिलाओं के दायित्वों की रूपरेखा भी नए परिवेश के साथ बदल रही हैं। महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक तथा राजनैतिक प्रस्थिति में सुधार करने तथा इन्हें विकास की मूलधारा से जोड़ने के लिए कल्याणकारी योजनाओं एवं विकासात्मक कार्यों के संचालन को स्थापित किया गया हैं। नयी विकास पंचायतों एवं न्याय पंचायतों ने नयी शक्ति व्यवस्था को जन्म दिया, जिसका उद्देश्य ग्रामीण शक्ति के श्रोतों को जन सहयोग तथा लोकतंत्र पर आधारित करना था। आज के ग्रामीण भारत में उभरता हुआ नेतृत्त्व कहां तक परिवर्तन लाने में सफल हो सकेगा, ग्रामीण शक्ति संरचना और इससे सम्बन्धित नेतृत्त्व का क्या भविष्य होगा? यह एक विचारणीय प्रश्न है। कार्ल मार्क्स ने शक्ति संरचना को उत्पादन की शक्तियों से जोड़ा है। यदि हम यह मानकर चलें कि जैसे–जैसे ग्रामीण अंचलों में आधुनिकीकरण का प्रवेश होगा और प्रजातंत्रीकरण शक्तिशाली होगा उसके फलस्वरूप एक नये प्रकार का नेतृत्त्व का जन्म होगा और शक्ति संरचना में परिवर्तन आयेगा जब से एक व्यक्ति एक वोट की राजनीति आयी है, तब से बड़े और छोटे के बीच अन्तर धीरे–धीरे समाप्त हो रहा है और नये प्रकार के नेतृत्त्व के जन्म की पृष्ठभूमि बन रही है।

मूल बिन्दु

पंचायतीराज, राजनीतिक नेतृत्व, लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण आदि।

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 02.09.2021
Approved: 15.09.2021

डॉ० शिवानी

पंचायतीराज के क्षेत्र में महिला नेतृत्व के उभरते प्रतिमान एवं चुनौतियां

RJPP 2021,
Vol. XIX, No. II,

pp.349-356
Article No. 46

Online available at *:*
https://anubooks.com/journal-volume/rjpp-2021-vol-xix-no2

प्रस्तावना

भारत गाँवों का देश है। गाँवों में सत्ता के विकेन्द्रीकरण का व्यावहारिक चित्र ग्राम पंचायतों के द्वारा प्राप्त होता है। भारत में पंचायतों का इतिहास अत्यन्त ही प्राचीन है। भारत में वैदिक काल से लेकर वर्तमान तक पंचायतों का अस्तित्व किसी न किसी रुप में सदैव रहा है। वैदिक युग में भी हमें पंचायतों का उल्लेख मिलता है। भारत में प्राचीन काल से ही यह मान्यता रही है कि पंच–परमेश्वर द्वारा दिया गया न्याय ही श्रेष्ठ एवं सर्वोपरि होता है। पंचों की वाणी में ईश्वर की वाणी होती है। प्राचीन काल से ही ग्रामीण विवादों को निपटाने के लिए जनता अपने में से जिन पांच समझदार अनुभवी व योग्य व्यक्तियों को चुन लेती थी, उन्हे पंच कहा जाता था, और उनके द्वारा लिए गये निर्णय को ही दैवीय निर्णय माना जाता था। न्याय के अलावा ग्राम पंचायतें प्रशासन के सभी कार्य करती थी।

पंचायतें स्थानीय आधार पर नियम बनाने, गाँव की व्यवस्था चलाने, विवादों को निपटाने तथा राजा की आज्ञा को स्थानीय स्तर पर व्यवहारिक रूप में लागू करने, कर इकट्ठा करने एवं राजकोश में गाँवों का अंशदान भिजवाने आदि का कार्य करती थी तथा गाँवों के विषय में कोई भी निर्णय लेने से पूर्व राजा पंचायतों की राय को ध्यान में रखता था। 'पंचायत शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'पंचायत शब्द से हुई है। जिसका अर्थ पांच व्यक्तियों का समूह था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एवं स्थानीय स्वशासन की दिशा में एक नई पहल प्रारम्भ हुई। 26 जनवरी, 1950 को स्वतंत्र भारत का संविधान लागू हुआ। संविधान में पंचायती राज को नीति निर्देशक तत्वों में स्थान दिया गया। संविधान के अनुच्छेद 40 में प्राविधान किया गया कि राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन इस प्रकार करने के लिए बाध्य होगा जिससे स्थानीय स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य कर सकें। इसके पश्चात् लगभग प्रत्येक राज्य ने इसी नीति निर्देशक तत्व के आधार पर पंचायतों के पुनर्गठन के लिए प्रयास किए जाने लगे। भारत में 1947 में सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश राज्य में ग्राम पंचायतों के विकास हेतु एक अधिनियम पारित किया गया, और इस अधिनियम के अंतर्गत सन् 1948 में ग्राम पंचायतों का पहला निर्वाचन सम्पन्न हुआ।

महात्मा गाँधी जी ने स्वतंत्र भारत में एक मजबूत पंचायतीराज शासन पद्धति का स्वप्न संजोया था जिसमें शासन कार्य की सबसे प्रथम ईकाई पंचायतें होगी। उनकी कल्पना पंचायतों की शासन व्यवस्था की धुरी होने के साथ ही आत्मनिर्भर पूर्णतः स्वायत्त और स्वावलंबी होने की थी। स्वतंत्रता के पश्चात् महात्मा गाँधी जी की इस परिकल्पना को साकार करने हेतु समय–समय पर प्रयास किये गए। कभी ग्रामीण विकास के नाम पर और कभी सामुदायिक विकास योजनाओं के माध्यम से पंचायतों को लोकतंत्र का मूल आधार मजबूत बनाने के लिए उपयोग किया जाता रहा। अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग तरह के प्रयोग इसके लिए चले। कुछ असफल रहे तो कुछ सफल रहे और अन्य राज्यों के लिए अनुकरणीय बने लेकिन पूरे देश में प्रशासन का विकेन्द्रीकरण करके बुनियादी स्तर पर पंचायतीराज की स्थापना और जनता के हाथ में, सीधे अधिकार देने की शुरुआत संविधान के 73 वें संविधान अधिनियम के माध्यम से संभव हुई।

स्थानीय स्तर पर पंचायती राज में महिलाओ की भूमिका

भारत में पंच परमेश्वर तथा महिला स्वतंत्रता की परंपरा प्राचीनकाल से ही प्रचलन में थी। पंचपरमेश्वर के रूप में ईमानदार और निष्ठावान सदस्य निष्पक्ष होकर सच्चा और सस्ता न्याय देते थे तथा महिलाएँ स्वतंत्रता पूर्वक अपने को साक्षर, शिक्षित और सशक्त बनाकर सामाजिक व्यवस्था को संतुलित एवं सर्वहितकारी बनाने में निर्विघ्न नहीं रह पाया। दुर्भाग्यवश सैकड़ों वर्शों की पराधीनता के काल में विदेशी शासक अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति हेतु पंचायती राज व्यवस्था तथा महिला स्वतंत्रता को जान–बुझकर समाप्त करने की चेष्टा करते रहे। महिलाओं को घरो की दीवारों के अंदर बंद रखने के लिए सतत प्रयास होते रहे, ताकि वे निरक्षर, अविकसित और शक्तिहीन बन जाएँ। ऐसी विकृत व्यवस्था स्थापित करने में एक सीमा तक सफल भी हुए। सौभाग्य से सन् 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ, तो पंचायती राज व्यवस्था को पुनर्जीवित और सक्रिय करने का प्रयास किया गया, फिर भी पुरुषों में सैकड़ों वर्षों की दासता वाली मानसिकता तथा महिलाओं में व्याप्त निरक्षरता और अबलापन की स्थिति के कारण पंचायती राज व्यवस्था सुदृढ़ और सक्रिय नहीं हो सकी। परिणामतः पुनर्जीवित की गई उस व्यवस्था से जो अपेक्षित परिणाम मिलने चाहिए थे, वे प्राप्त नहीं हो सके। उस स्थिति को सुधारने के लिए भारतीय संविधान में सन् 1992 में संशोधन अधिनियम (73वाँ) पारित किया गया, ताकि पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं का प्रतिनिधित्व कम से कम तिहाई अवश्य हो सके। संविधान के संशोधन से यह स्थिति तो बनी कि सवसे निचले स्तर पर ग्राम पंचायतों में महिलाओं को एक तिहाई प्रतिनिधित्व मिल गया।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल आबादी 102.87 करोड है। इसमें से 53.22 करोड़ पुरुष एवं 49.65 करोड़ महिलाएँ हैं। इन 49.65 करोड़ महिलाओं की स्थिति की बात की जाए तो स्थिति दयनीय के अलावा कुछ भी नहीं है। भारतीय संस्कृति में कहा गया है कि **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः"** अर्थात जहाँ नारी का सम्मान होता है वहीं पर देवताओं का निवास होता है किन्तु वस्तु स्थिति में ऐसा नहीं हैं। भारत में लिंगानुपात की बात करें जो सन् 2011 की जनगणना के अनुसार 943 महिला है। इसका मतलब यह है कि 1000 पुरुषों की तुलना में 943 महिलाएँ हैं। वही अनुपात ग्रामीण क्षेत्र में 949 है। लेकिन जहाँ हम अपने आपको शहरों में रहते हुए आधुनिकतावादी और पढ़ा लिखा मानते हैं यह अनुपात 929 है, जो हमारी संकीर्ण मानसिकता को दर्शाता है। इसका सीधा कारण बेटियों के प्रति अस्वीकार्यता है, जिसमें भ्रूण हत्या भी शामिल है।

शिक्षा की बात करें तो सन् 2011 की जनगणना के अनुसार कुल 73% साक्षरों में पुरुष साक्षरता 80.9% और महिला साक्षरता 64.6% है। वहीं इसकी तुलना सन् 2001 की जनगणना से करे तो पता चलता है कि महिलाओं की साक्षरता में सुधार हुआ तो है लेकिन वह सुधार प्राथमिक स्तर पर ही है। जैसा की हमें पता चला है पिछले कई वर्षों से 10 वीं एवं 12 वीं की परीक्षाओं के परिणामों में बालिकाएँ, बालकों से बेहतर प्रदर्शन कर रही है। लेकिन परिवार एवं सामाजिक दबाव जैसे की कम आयु में विवाह, घर का कामकाज, परिवार में महिलाओं के शिक्षा के प्रति उदासीनता एवं बालकों की पढ़ाई की प्राथमिकता के चलते बालिकाओं की पढ़ाई ज्यादातर वहीं समाप्त हो जाती है या उसकी

कोई प्राथमिकता ही नहीं रहती। शिक्षा का यह पंजीकरणीय अनुपात माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर पर जाकर बहुत कम हो जाता है।

आज भी कई क्षेत्र जैसे की पुलिस, सेना, पायलट, चार्टर्ड अकाउंटेंट, कमांडो इत्यादि जो पहले पुरुषों के लिए ही थे लेकिन अब महिलाएं भी इनमें बेहतर प्रदर्शन कर रही है फिर भी उनकी क्षमता को पूरी तरह से उपयोग में लाया नहीं जा रहा है। विशेष तौर पर इस कमी को दूर किये बगैर महिला सशक्तिकरण की कल्पना बिलकुल भी संभव नहीं है। आम तौर पर पूरे घर का बोझ महिलाओं पर ही होता है वहीं बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य की देखभाल करती है, इसी प्रक्रिया में वह स्वयं की देखभाल नहीं कर पाती और न ही परिवार उसका ख्याल रख पाती है।

महिलाएं आज भी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर और स्वतंत्र नहीं है। कोई भी निर्णय चाहे वह स्वयं के भविष्य के निर्माण के लिए ही क्यूं न हो, नहीं ले सकती है। प्रत्येक निर्णय में परिवार और समाज का काफी दबाव होता है। जब तक महिलाओं की शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, सामाजिक, राजनैतिक एवं लिंग समानता नहीं होगी तब तक हम किसी भी स्वस्थ, परिपक्व एवं प्रगतिशील समाज और देश की कल्पना भी नहीं पाएंगे।

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति

पंचायती राज में महिला सहभागिता का क्षेत्रीय नेतृत्व उस क्षेत्र में स्त्रियों की दशा का दर्पण है। उस क्षेत्र की सामाजिक–पारिवारिक परिवेश तथा परिस्थितियों से महिला नेतृत्व की स्थिति स्पष्ट होती है। महिलाओं में साक्षरता की दर बढ़ रही है। गांवों में भी बालिका शिक्षा का चलन हो रहा है। अब महिलायें भ्रूण हत्या को रोकने में सजग है। अधिक बाल मृत्यु दर भी कम हो रही है। ग्रामीण नेतृत्व की श्रेणी में 30–45 वर्ष की महिलाएं ज्यादा निर्वाचित होकर काम कर रही है। अब वे अपनी शैक्षणिक स्थिति को बढ़ाने की दिशा में सोच रही है। महिलाओं में राजनीतिक जागृति और प्रशासनिक क्षमताओं का विकास होने लगा है।

पंचायतों में महिलाओं की भूमिका

महिलाओं के राजनीतिक नेतृत्व उद्‌भव, स्वरूप, परिवर्तन एवं भूमिकाओं का परीक्षण नये दृष्टिकोण से करना भी आवश्यक प्रतीत होता है। अध्ययनों से पता चला है कि प्रारम्भिक स्तर पर अधिकांश महिलायें पर्याप्त रूप से सक्रिय भूमिका में नही रही परन्तु कालान्तर में उनकी भूमिका में उत्तरोत्तर विकास हुआ है। प्रजातांत्रिक प्रयोगों के फलस्वरूप उनकी सामाजिक विशेषताओं में जो परिवर्तन आया है वह सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। परंपरागत उच्च वर्गों की महिलाओं की जगह पर मध्य एवं निम्न सामाजिक वर्गों की महिलायें नेतृत्व प्रदान कर रही है। शिक्षा एवं आर्थिक समृद्धि के फलस्वरूप औसत आयु में भी परिवर्तन आया है। अब युवा वर्ग की महिलायें जो कि लिखी–पढ़ी भी है राजनीतिक नेतृत्व में सशक्त भागीदारी निभा रही है।

भारत सहित विश्व के अधिकांश देशों में लगभग आधी संख्या महिलाओं की है लेकिन किसी भी देश में महिलाओं के लिए पुरुषों के समान अवसर उपलब्ध नहीं है। विकासशील राष्ट्रों की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितियाँ अभी भी अपरिपक्व तथा परंपरागत रूढ़ियों से ग्रसित हैं, किन्तु विकसित राष्ट्रों में समस्त प्रकार की आधुनिकता के बावजूद महिलाओं को समानता

का दर्जा नहीं दिया गया है। भारत में शिक्षा एवं जागरूकता के प्रसार के बाद महिलायें अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुई हैं। लोकसभा और विधानसभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण की माँग इसी जागरूकता का लक्षण है। चूँकि महिलाओं की भूमिका समाज एवं राष्ट्र में सर्वोपरि हैं। अतः यदि उन्हें सत्ता में भागीदार बनाया जाता है तो यह निःसंदेह देश के समग्र विकास की दिशा में उठाया गया एक सार्थक, महत्वपूर्ण एवं क्रांतिकारी कदम होगा। महिलाओं को अधिकार सम्पन्न बनाने का यही सर्वश्रेष्ठ तरीका है कि कानून तथा नीतियां तैयार करने वाली संस्थाओं अर्थात संसद एवं राज्यों की विधानसभाओं में महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित किए जाए। सामाजिक न्याय तथा समानता के पोषक ये संवैधानिक प्रावधान राज्यों में कार्यान्वित हो चुके हैं किन्तु शिक्षा तथा समाज की संकुचित मानसिकता के कारण निर्वाचित महिला जनप्रतिनिधि पूर्णतया सफल सिद्ध नहीं हो पायी है तथापि यह एक अच्छी शुरुआत है जो भविष्य में सार्थक परिणाम लाएगी।

महिलाओं की सोच दूरगामी होती है अतः वे किसी भी कार्य को वहुत ही अच्छे ढंग से कर सकती है साथ ही महिलायें संसाधनों का उपयोग भी सही ढंग से करती है। पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी इसलिए भी जरूरी है ताकि महिलाये स्वयं को कमजोर समझ कर समाज में जो हो रहा है उसे चुपचाप बर्दाश्त न करें। अपना आत्म विश्वास बढ़ाकर विकास की प्रक्रिया में बराबर की भागीदारी कर सके। अपने गाँव, क्षेत्र संबंधित निर्णयों में अपनी भागीदारी निभा सके। निर्णय स्तर पर भागीदारी निभाने से महिलाओं की आवश्यकताओं, समस्याओं, मुद्दों, प्राथमिकताओं को वरीयता मिलेगी।

महिलाओं की सहभगिता मे चुनौतियाँ

संवैधानिक रूप से प्रारम्भ की गई विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया ने महिलाओं का प्रतिनिधित्व भले ही सुनिश्चित किया है। लेकिन मात्र प्रतिनिधित्व, सहभगिता सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। पारंपारिक, सामाजिक बंधनों, लोक–लाज, छोटे–बड़े के लिहाज, आर्थिक आत्मनिर्भरता की कमी, शैक्षिक पिछड़ापन, पारिवारिक दायित्व, समयाभाव से जूझती महिलाओं के लिए अवसर मिलने पर भी निर्णय निर्माण प्रक्रिया में सहभागिता निभा पाना सहज संभव नहीं है। फलतः महिला पंचायत प्रतिनिधि पुरुषों के हाथों की कठपुतली बनकर रह जाती है, प्रधान पति का अस्तित्व इस तथ्य का प्रमाण है। आज भी महिलायें अपनी बात प्रभावी ढंग से पंचायत में रखने में असमर्थ है और पंचायतें सशक्तिकरण के क्षेत्र में महिलाओं के सरोकारों पर समुचित ध्यान नहीं दे पा रही है। पंचायती चुनावों में कई क्षेत्रों में यह देखा गया है कि समाज के प्रतिभाशाली व्यक्ति अपनी ही पत्नी, बहन, माँ अथवा किसी अन्य सम्बन्धी महिला को चुनाव में उम्मीदवार के रूप में खड़ा कर देते हैं, जो वाद में उन्हीं के इशारे पर काम करने को विवश होती है। प्रधानमंत्री ने महिला सरपंचों को उनके बेहतर काम के लिए बधाई देते हुए उनके पतियों को काम में हस्तक्षेप न करने की सलाह दी है। प्रधानपति शब्द अब लोगों के लिए नया नहीं रहा। यह बताता है कि आरक्षण के माध्यम से पंचायतों में महिलाओं ने सत्ता हासिल की है, लेकिन पुरुष अब भी खुद को सत्ता का हकदार मानकर उसे नियंत्रित करने में कोई कसर नहीं छोड़ते। भारतीय समाज में वह भी विशेषकर ग्रामीण पृष्ठभूमि में स्त्री स्वयं को अपने पति से हर दृष्टि से कमतर समझती है, जिसका सीधा और स्पष्ट कारण शिक्षा का अभाव है। एक नया

चलन यह देखने को आया है कि जिन सीटों पर महिलाओं के लिए आरक्षण नहीं है, उन्हें पुरुष सीट कहा जाने लगा हैं, अक्सर महिलाओं को इन सीटों से चुनाव लड़ने की सलाह दी जाती है जबकि यह पूरी तरह से आरक्षण की मूल भावना के खिलाफ है। पंचायत निर्वाचन के नियमों के अनुसार महिलायें अनारक्षित एवं आरक्षित कहीं से भी चुनाव लड़ सकती है। जबकि अक्सर देखने में आया है कि महिला आरक्षित सीट से ही चुनाव लडती है।

किसी भी समाज का सर्वांगीण विकास तभी संभव हो सकता है जब उस समाज में रह रही महिलाओं को विकास में बराबरी की भागीदारी मिले। हमारे समाज में महिलाओं की संख्या कुल आबादी के लगभग आधी है। ऐसे में महिलाओं को विकास की प्रक्रिया में जोड़े विना किसी भी देश, राज्य व क्षेत्र के विकास की कल्पना करना राज्य, समाज व क्षेत्र के साथ छलावा (अव्यवहारिक) है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार ने महिलाओं को विकास में प्राथमिकता देते हुए शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक व आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए विभिन्न योजना एवं कार्यक्रम चलाये। चाहे महिला सशक्तिकरण का नारा कितना आकर्षक क्यों न लगे, लेकिन यह एक कड़वा सच है कि अधिकांश महिलाओं के लिए अपनी क्षमता और प्रतिभा के विकास की सामाजिक, आर्थिक, एवं राजनीतिक परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं है। यदि महिला–पुरुष के विकास को लैंगिक आधार पर जाँचा जाए तो स्पष्ट विषमता नजर आती है। महिलाओं के विकास हेतु भारतीय संविधान में नियोजित विकास की रणनीति, कानूनों आदि की प्रतिवद्धताएँ तो व्यक्त की गई है। समाज में शैक्षिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, आर्थिक विकास के लिए नारी का शक्तिशाली वा शिक्षित होना समाज की जररत हो गई है और जब तक नारी सशक्त नहीं होगी समाज सशक्त नहीं होगा।

वैश्विक क्षितिज पर महिला सशक्तीकरण हेतु सामाजिक व स्वैच्छिक संगठनों के प्रयासों, आंदोलनों और यूएनडीपी व मानवाधिकार, आदि अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के संगठित हस्तक्षेप के माध्यम से महिलाओं के लिए सामाजिक समता, स्वतंत्रता और न्याय के राजनीतिक अधिकारों को प्राप्त करने की बात दृढ़ता से रखी गई ताकि विश्व की जनसंख्या में लगभग 50 प्रतिशत हिस्सा रखने वाली यह मानवशक्ति विविध क्षेत्रों में अपनी असरकारक भूमिका सुनिश्चित कर अपने व समाज के विकास में महत्वपूर्ण योगदान कर सके। महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया में महिलाओं को सभी स्तरों अर्थात् शारीरिक, मानसिक, मनो–सामाजिक, आर्थिक आदि पर सशक्त बनाने हेतु उनमें जरूरी आत्मविश्वास पैदा करने का कार्य शामिल किया जा सकता है।

समाज का महिला के प्रति दृष्टिकोण

स्पष्ट है कि महिलायें निर्णय लेने हेतु स्वतंत्र नहीं है। देश के बड़े हिस्से में पर्दा प्रथा प्रचलित है अतः महिलायें पुरुषों के समान समाज के क्रियाकलापों में भाग नहीं ले पाती। आज कुछ पुरुष दहेज प्रथा की बुराई तो करते हैं परंतु वे अपनी ही बहन को पिता की संपत्ति में हिस्सा देने को तैयार नहीं है। समाज में महिलाओं के स्वीकृत अधिकार, उनकी भूमिका, उनका अपना व्यवहार और उनके प्रति दूसरों के व्यवहार का निर्धारण करने वाले नियम हर समाज और समुदाय के अलग–अलग और अपने–अपने हैं, यह काफी कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि समाज में उस समुदाय विशेष का

क्या स्थान है और विकास के स्तर पर वह कहाँ खड़ा होता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक महिलाओं का सारा जीवन परंपरा व धर्म से निर्धारित होता है।

राष्ट्र के विकास में महिलाओं की सच्ची महता और अधिकार के बारे में समाज में जागरूकता लाने के लिये मातृ दिवस, अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस आदि जैसे कई सारे कार्यक्रम सरकार द्वारा चलाये जा रहे है और लागू किये गये है। पंडित जवाहरलाल नेहरु द्वारा कहा गया मशहूर वाक्य लोगों को जगाने के लिये महिलाओं का जागृत होना जरुरी है। एक बार जब वो अपना कदम उठा लेती है, परिवार आगे बढ़ता है, गाँव आगे बढ़ता है और राष्ट्र विकास की ओर उन्मुख होता है।

निष्कर्ष

नयी विकास पंचायतों एवं न्याय पंचायतों ने नयी शक्ति व्यवस्था को जन्म दिया, जिसका उद्देश्य ग्रामीण शक्ति के श्रोतों को जन सहयोग तथा लोकतंत्र पर आधारित करना था। अब ग्रामीण नेताओं का चुनाव वर्ग एवं जाति के स्थान पर उनके अर्जित गुणों के आधार पर होने लगाँ यद्यपि पंचायत चुनावों से सम्बन्धित अनेक अध्ययन इस बात की पुष्टि करते हैं कि अब भी कई गाँवों में एक पंच एवं सरपंचों के चयन में जाति एवं वर्ग का महत्त्व कम नहीं हुआ है। आर्थिक विषमता के कारण भू–स्वामियों, बड़े–बड़े किसानों तथा साहूकारों का अब भी ग्रामीण शक्ति संरचना व नेतृत्व में महत्त्वपूर्ण स्थान है। ग्रामीण काश्तकारों की भू–स्वामियों एवं साहूकारों पर आर्थिक निर्भरता अब भी बनी हुई है। परम्परागत रूप से गाँव की शक्ति संरचना और नेतृत्त्व उच्च जातियों के हाथ में था। उनके पास उच्च सामाजिक स्थिति थी, क्योंकि वे धन और सम्पत्ति के आधार पर उच्च सामाजिक स्थिति प्राप्त किये हुए थे। भूमि सुधार और जमींदारी उन्मूलन से शक्ति समूहों में परिवर्तन आया है ओर इसके फलस्वरूप मध्यम तथा निम्न जातियां भूमिधर के रूप में विकसित हुए और गाँवों की शक्ति संरचना में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किए हैं ग्रामीण शक्ति समूह वर्तमान युग में सत्ता प्राप्त करने के प्रलोभन में फंसे हैं और गाँव के विकास में उनकी रूचि नहीं है। गाँव में प्रजातंत्रीय संस्थाएं जैसे– गाँव पंचायत, सामुदायिक विकास खण्ड योजनाओं का लाभ केवल शक्तिशाली समूहों को ही मिला है और उन्होंने अपनी आर्थिक और धार्मिक सामाजिक स्थिति को सबल बनाया है। गाँव में जहाँ पढ़े–लिखे नवयुवक नेतृत्त्व को संभाल रहे हैं, वहां परिवर्तन और विकास की किरण देखने को मिल रही है।

सदर्भ

1. मल, पूरण. (2007). पंचायती राज एवं दलित नेतृत्व. आविष्कार पब्लिशर्स, हिस्ट्रीब्यूटर्सः जयपुर, राजस्थान. पृष्ठ **13.** मल, पूरण. (2007). पंचायती राज एवं दलित नेतृत्व. आविष्कार पब्लिशर्स, हिस्ट्रीब्यूटर्सः जयपुर, राजस्थान. पृष्ठ **1.**
2. वंशल, वन्दना. (2004). पंचायती राज एवं महिला भागीदारी. कल्पराज पब्लिकेशानः दिल्ली. पृष्ठ **42.**
3. जायसवाल, अनुपमा. पंचायती राज में अनुसूचित महिलाओं का नेतृत्व एवं राजनीतिक सहभागिता राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायत राज संस्थान विशेषांक. पृष्ठ **5.**

4. रानी, शशि. वर्तमान परिपेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायत राज संस्थान विशेषांक. पृष्ठ **31.**
5. कुमारी, अर्चना. (2009). भारत में महिला राजनीतिक नेतृत्व के आयाम भारतीय राजनीति विज्ञान शोध पत्रिका. पृष्ठ **365.**
6. राधाकृष्णन. (2009). पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भूमिका : समस्या एवं समाधान भारतीय राजनीतिक विज्ञान शोध पत्रिका. पृष्ठ **445.**
7. श्रीधर, प्रदीप. (2010). स्त्री चिंतन की अन्तर्धारायें और समकालीन हिंदी उपन्यास. तक्षशिला प्रकाशनः दिल्ली. पृष्ठ **32.**
8. पाटक, ममता. (2013). महिलायें और विकास (दशा, दिशा एवं संभावनायें) रजना मिश्रा द्वारा सम्पादित पुस्तक भारत में नारी राजनीतिक परिवर्तन. कैलाश पुस्तक सदनः भोपाल. पृष्ठ **14.**
9. सारस्वत, ऋतु. (2015). महिला सशक्तिकरण आरक्षण से आगे. हिन्दुस्तान. 30 अप्रैल।
10. मद्योक, सुजाता. (2001). मीडिया और महिला सशक्तिकरण योजना. अक्टूबर. पृष्ठ **3.**